: मानव जाती, मानव धर्म

मानव धर्म के बारे में, तीन आशय समाहित हैं| विकसित चेतना में जीता हुआ मानव, देव मानव, दिव्य मानव का अध्ययन है | चेतना के सन्दर्भ में चार भाग में अध्ययन है: जीव चेतना, मानव चेतना, देव चेतना, दिव्य चेतना | जीव चेतना विधि से सम्पूर्ण अपराध मानव कर्ता हुआ देखने को मिला, उसका गवाही शिक्षा में लाभोन्माद, भोगोन्माद, कामोन्माद ही शिक्षा | हर अभिभावक अपने संतान को सुशील देखना चाहता है, हर देश काल में| उक्त प्रकार के तीनो उन्माद का शिक्षा देते हुए सुशील रहना कितना संभव है, हर अभिभावक सोच सकते है| विकसित चेतना के प्रमाण में यही आचरण में पाया जाता हैं की समाधान, समृद्धी, अभय, सहअस्तित्व सहज प्रमाण है | सहअस्तित्व में अनुभव का यह प्रमाण हैं| सहअस्तित्व (*'अस्तित्व', 'जो भी है'*) अध्ययनगम्य हो चुकी है| ऐसे सहअस्तित्व में अनुभव मूलक विधि से सोचा गया विचारों का प्रमाण, नियम-नियंत्रण-संतुलन; न्याय-धर्म-सत्य रूप में व्यवहार में प्रमाणित होता हैं|

अनुभव मूलक विचार शैली सम्मत व्यवहार में स्वधन, स्वनारी/स्वपुरुष, दयापूर्ण कार्य व्यवहार के रूप में प्रमाणित होता हैं| इसे जीके, प्रमाणित करके देखा हैं| जिसका प्रयोजन अखंड समाज-सार्वभौम व्यवस्था है| इसके लिए ऊपर कहे गए आचरण विधि से वर्तमान में विश्वास होना होता है, फलस्वरुप अखंड समाज होता है| अखंड समाज व्यवस्था ही '१० सोपनीय विधि' से परिवार सभा मूलक व्यवस्था होता है| यही सार्वभौम व्यवस्था है| यही विकसित चेतना का फल परिणाम है जिसमे भागीदारी हर व्यक्ती का होना होता है|

- व्यक्ती में समाधान
- परिवार में समाधान, समृद्धी
- समाज में अखंडता
- व्यवस्था में सार्वभौमता

सहज प्रमाण ही भ्रम मुक्त, अपराध मुक्त मानव का स्वरुप है| इस प्रकार के मानव तैयार होना ही, इस प्रकार से नर नारी तैयार होना ही अपराध मुक्त, भ्रम मुक्त मानव जात का पहचान है| मानव जाती एक होने के मूल में काले, भूरे, गोरे और विभिन्न नस्ल समेत पाए जाने वाले मानव जात में खून के प्रजातियों का समानता के आधार पर, शरीर रचना में समाहित हड्डियों क्र आधार पर, अंग और अव्व्यों के आधार पर एक होना, इन सबका संयुक्त रूप में नाखून, दांत, के बनावट तीखे होना, खून के प्रजातियां निश्चित होना और आतों में मांसाहारी जात के जीवों का आंते छोटे होना, शाकाहारी जीवों के आंते लंबी होना, इन्ही आधारों पर मानव जाती एक होना अध्ययनगम्य हो चुकी है| मानव सुख धर्मी है, समाधान ही मानव धर्म है| समाधान समझदारी से होता है, समाधान से ही मानव सुख का अनुभव कर्ता है, यही मानव धर्म है| यह अध्ययनगम्य हो चुकी है| छत्तीसगढ़ स्कूल शिक्षा विभाग इसे अध्ययन कर रहा है| इस प्रकार शरीर रचना के आधार पर मानव जाती एक है, एवं समाधान (समझदारी) के आधार पर मानव धर्म एक है (सुख)| इसी के आधार पर मानव जाती एक, धर्म एक होने का प्रतिपादन २३ अप्रैल २०१२ को होगी| मानव जाती एक, धर्म एक होने के आधार पर अखंड समाज, सार्वभौम व्यवस्था के अर्थ में 'मानव मंदिर' का स्थापन ग्राम करौली, कानपूर, उत्तर प्रदेश में हुआ है| जय हो, मंगल हो, कल्याण हो !

- **ए नागराज,** प्रणेता, मध्यस्थ दर्शन - सह-अस्तित्ववाद , अमरकंटक, जि अनूपपुर, म.प्र. भारत
- अधिक जानकारी के लिए www.madhyasth.info देखें

मानव धर्म एक, मानव जाति एक

मानव धर्म एक, मानव जाति एक। अब से पहले प्रमाणपूर्वक ऐसा वचन नहीं कहा गया था। मध्यस्थ द नि के प्रणेता अमरकंटक निवासी 93 वर्शीय दा निक अग्रहार नागराज ने अनुसंधानपूर्वक संपूर्ण अस्तित्व को समझा। इसी में मानव का भी अध्ययन हुआ। इसी आधार पर मानव के बारे यह निश्कर्श निकला। इसे हर मानव स्वयं जांच सकता है और समझ सकता है। सभी को समझने के लिए इसे विकल्प विधि के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

मानव, जीवन और भारीर का संयुक्त रूप है

ज्ञानगोचर दृश्टि से देखने पर जीवन समझ में आता है। इसके बाद यह भी समझ में आता है कि दुनिया का हर मानव सुखी रहना चाहता है। इसलिए सुखधर्मी है। यही मानव का धर्म है। भारीर दृश्टिगोचर विधि से दिखता है। भारीर के आधार पर संपूर्ण मानव जाति एक है। मानव को देखने से जीवित दिखता है। प्रत्येक मानव, प्रत्येक मानव को जांच सकता है। जीवित रहना ही मानव की संज्ञा है। भारीर ही मरता है, भारीर ही जन्मता है। यह प्रजनन विधि से होता है। प्रजनन विधि प्राणको ाओं से संबंधित है।

भारीर के साथ जाति का संबंध है

भारीर विभिन्न जलवायु में, विभिन्न प्रकार के नस्ल–रंग के साथ अवतरित होना देखने को मिल रहा है। साथ ही नस्ल, रंग के साथ ज्ञानाभ्यास और कर्माभ्यास, इन दोनों के योगफल में जातियों की गणना होना अभी तक मानव परंपरा में प्रचलित है जबकि मानव सभी स्थितियों में मानव ही है। इस आधार पर निर्णय लिया जा सकता है कि सभी समझ सकते हैं, प्रमाणित कर सकते हैं। यह एक आधार पर मानव जाति एक है। इसे सब समझ सकते हैं। इसके लिए 23 अप्रैल को कानपुर में सर्व धर्म सम्मेलन निर्धारित हुआ है।

मानव धर्म एक

मानव स्वयं में अथवा सर्व मानव जीवन और भारीर के रूप में वैभवित रहना पाया जाता है। अभी तक मानव व्यक्तिवाद, समुदायवाद के साथ जीया है। अभी तक जो भी धर्म कहा, वह सामुदायिक को कहा, यह एक दूसरे से मिला नहीं। इसलिए यह सीमा सुरक्षा बना है। धर्मयुद्ध जैसे भाब्दों से युद्ध में भी धर्म को बताया जाता है। युद्ध और धर्म का क्या ताल्लुक है? युद्ध

और संघर्श मुक्त विधि से ही मानव धर्म का प्रयोजन है। यह मानव जीकर प्रमाणित कर सकता है। हर दे ाकाल में यह तीन स्तर पर पहचाना जाता है। पहला जीवनमूलक विधि से पहचान, दूसरा विचार मूलक विधि से प्रमाण और तीसरा व्यवहारमूलक विधि से प्रमाण।

अनुभवमूलक प्रमाण को समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व के रूप में देखा। विचारमूलक प्रमाण को नियम, नियंत्रण, संतुलन, न्याय, धर्म, सत्य के रूप में होना पाया। व्यवहारमूलक प्रमाण स्वधन, स्वनारी/स्वपुरूश, दयापूर्ण कार्य व्यवहार है। ये तीनों ही मानव के स्वरूप में हैं। इसे समझने से स्पश्ट हो जाता है कि मानव धर्म एक और मानव जाति एक है।

-अजय यादव (श्री ए नागराज के लेख पर आधारित)

अधिक जानकारी के लिए www.madhyasth.info देखें

मानव का मूल्य

दुनिया का एक–एक मानव सुखी होकर जीना चाहता है। यही मानव की मूल चाहत है। हर कोई इस चाहत को पूरा करना ही चाहता है। जीवन विद्या यानी जीवन ज्ञान, अस्तित्व द र्न ज्ञान और मानवीयतापूर्ण आचारण ज्ञान, यदि समझ में आता है तो सुखी होने का रास्ता बनता है। इसमें ही सर्व ुभ का आधार है। सबके निरंतर सुखी होने का स्रोत है। समाधानित रहने का प्रमाण है। ये सब चीजें अपने आप से उद्‌गमित होते हैं। हर मानव ऐसा ही चाहता है। अकेले कोई होता नहीं, इससे ये सिद्धांत निकलता है। इस धरती के संबंध को छोड़कर कोई मानव सुखी होने का प्रयत्न करे तो हो नहीं सकता। पानी से संबंध छोड़कर सुखी कोई हो नहीं सकता। किन्हीं भी चीजों के संबंध को छोड़कर हम सुखी नहीं हो सकते तो मानव या जीवन संबंध को छोड़कर कैसे जी पायेंगे? मनुश्य कैसे यांत्रिक हो जायेगा? भावनात्मक संसार से कैसे मुक्ति पायेगा? आप ही सोचो ये कैसे हो सकता है? हम बाजार में जाते हैं, सब्जी, अनाज, सोना, लोहा, सबका भाव पूछते हैं, उस भाव का दृश्टा कौन है? मनुश्य ही होता है। जब सबका भाव है तो मनुश्य का भी भाव होगा। मनुश्य के भाव का पता लगाना ही पहली आव यकता है, पर विडंबना देखिये मानव ने अपने ही भाव को छोड़कर सबका भाव पकड़ लिया। जिनसे लाभ का मौका मिला, उन सभी भावों को पकड़ लिया जबकि मनुश्य का भाव यानी उसका मूल्य समझ लें तो लाभ–हानि से मुक्त हो जायेंगे, क्योंकि मानव मूल्य समझने से, जीवन मूल्य समझने से, स्थापित मूल्य समझने से, ि ाश्ट मूल्य समझने से हमको लाभ–हानि की आव यकता भाून्य हो जाती है। समझदारी आने पर हर व्यक्ति के साथ ऐसा ही होता है। सोचो, जरा ऐसा होने पर संसार की छाती का कितना बड़ा बोझ हल्का हो सकता है। लाभ–हानि के चक्कर में आदमी न तो अपने को बचाता है, पराया बचाना ही नहीं। इसी चक्कर में सबका कत्ल, सब चकनाचूर करना होता है। इस झंझट से मुक्ति तो इसी विधि से आता है कि मानव मूल्यों को समझने में समर्थ हो जायें। उसके पहले यह होने वाला नहीं है। जीवन विद्या समझ में आने से, अस्तित्व, सहअस्तित्व के रूप में समझ में आने से और मानवीयतापूर्ण आचरण में वि वास होने से मानव मूल्य चरितार्थ होता है। यही ज्ञान है।

-ए नागराज

समझदारी ही सुख

समझदारी से ही कल्याण होगा। समझदारी से ही सुखी, समृद्ध होते हैं। समझदारी में वर्तमान में व्यवस्था के रूप में जीते हैं। तभी सह–अस्तित्व को प्रमाणित करते हैं। सुख के चार चरण हैं, समाधान, समृद्धि, अभय, सह–अस्तित्व। यानी हर मानव में समाधान, परिवार में समृद्धि, समाज में अभय और अस्तित्व में सह–अस्तित्व। ये चारों चीजें आती हैं तो हम सुखी हो जाते हैं। जब तक ये चारों चीजें नहीं आती हैं तब तक हम प्रयत्न करते रहते हैं। यह सदा–सदा से हो ही रहा है। इस प्रयत्न के क्रम में ही हम तमाम जप–तप, पूजा–पाठ, योग–यज्ञ कर डाले हैं। बहुत सारी चीजें, धन–संपदा भी इकट्ठा किये हैं, किंतु इससे सब लोग तो सुखी नहीं हुए। एक ही परिवार के सब लोग सुखी नहीं हो पाते हैं। ऐसा ही समाज में देखने में आता है। सभी के सुखी होने के लिए सभी का समझदार होना आव यक है। ऐसा होता नहीं कि एक व्यक्ति ज्ञानी हो जाये और सबको तार दे। हर व्यक्ति को सुखी होना है तो फिर समझदार होना ही होगा। अवसर यह है कि समझदारी सबमें पहुंचाया जा सकता है।
समझदारी के लिए पहला चरण है अस्तित्व को समझना। अस्तित्व चार अवस्था में है। पहला पदार्थावस्था, जिसमें मिट्टी, पाशाण, मणि, धातु आदि हैं। ये सब अपने आचरण में प्रमाणित हैं हीं। दूसरी प्राणावस्था जिसमें सभी वनस्पतियां, औशधियां हैं। ये सब भी अपने आचरणों में स्वयं प्रमाणित है। तीसरी जीवावस्था जिसमें मनुश्य को छोड़कर सभी जीव–पक्षी आते हैं। ये सभी भी अपने त्व सहित व्यवस्था के रूप में प्रमाणित हैं हीं। चौथी ज्ञानावस्था है जिसमें केवल मनुश्य है, जिसको व्यवस्था में होने में अभी प्रतीक्षा है। अब सोचिये सबसे विकसित अवस्था सबसे पीछे है। क्या मतलब है इसका? ऐसा जीने–रहने पर दुख नहीं होगा तो क्या होगा?

इसलिए बात की जा रही है समझदारी की। तभी व्यवस्था में जिया जा सकता है और तभी सुखी रहा जा सकता है। हमारा चरित्र भी विकसित के रूप में होने की आव यकता है। आचरण के रूप में हर वस्तु अपनी व्यवस्था को प्रमाणित करते हैं। मानव भी अपने आचरण में व्यवस्था को प्रमाणित करेगा। इसकी संभावना भी है, प्रयास भी हैं। इसी के बाद मानव का सुखपूर्वक व्यवस्था में जीना और उसकी परंपरा बनना नि चत होगा।

- ए नागराज

अधिक जानकारी के लिए www.madhyasth.info देखें

जीवन विद्या

मानव मूल्य जब हम चरितार्थ करना भाुरू करते हैं, तभी हम सही करने में समर्थ, पारंगत होते हैं। तब तक किसी न किसी उन्माद में जकड़े ही रहते हैं और हमको सही करने का कोई रास्ता मिलता नहीं। इसे ही नासमझी और भटकना कहा है। यही समस्या और दुख के रूप में दिखाई देता है। कोई दुखी होना नहीं चाहता, इसलिए छटपटाता है। समझदार होने के लिए जीवन तथा अस्तित्व को समझना ही विकल्प है। इसके बिना समझदारी होती नहीं। यही जीवन विद्या है। विद्या के दो भाग हैं ज्ञान और द िन। इन दोनों का धारक–वाहक जीवन ही है। जीवन ज्ञान का मतलब जीवन की जीवन को समझने की प्रक्रिया से है। जीवन ही जब अस्तित्व को समझता है तब इस प्रक्रिया को अस्तित्व द िन कहा। सभी जीवन समान हैं और सारे मनुश्यों में जीवन एक समान है। जीवन की जीवन को समझने की विधि में, प्रमाणित करने की विधि में, अस्तित्व को समझने की विधि में, सहअस्तित्व को प्रमाणित करने की विधि में यह आया कि सभी जीवन समान हैं।

समझने की व्यवस्था भारीर में हाथ–पैर, कान–नाक, चक्षु, मेधस, हृदय कहीं भी नहीं है। अभी तक यह भी बड़ी झंझट रही है कि समझने वाला मस्तिश्क ही होता है, कई लोग इस पर बहस तक करते देखे जाते हैं पर जरा सी गहराई से देखने पर ही पता चल जाता है कि यह व्यवस्था जीवन में ही है। जीवन ही जीवन को और अस्तित्व को समझने वाली वस्तु है और दूसरा कोई समझेगा नहीं। इस ढंग से निश्कर्श निकलता है कि मनुश्य समझदारी व्यक्त करने के लिए, समझदारी प्रमाणित करने के लिए, भारीर और जीवन के संयुक्त रूप में होना जरूरी है। यह केवल भारीर या केवल जीवन रहने पर नहीं होगा। प्रमाणित करने का केंद्र बिंदु हुआ व्यवस्था में जीना और समग्र व्यवस्था में भागीदारी करना। यही समझदारी की सार्थकता है। हम सब व्यवस्था में जीना ही चाहते हैं, यह प्रक्रिया जीवन सहज ही है, यह कोई लादने वाली चीज नहीं है। अस्तित्व को समझने के क्रम में अस्तित्व स्वयं सहअस्तित्व है क्योंकि सत्ता यानी व्यापक में डूबी, भीगी, घिरी प्रकृति ही संपूर्ण अस्तित्व है।

- ए नागराज

अधिक जानकारी के लिए www.madhyasth.info देखें

जीवन का स्वरूप

जीवन गठनपूर्ण परमाणु है, चैतन्य इकाई है। इसीलिए इसमें संज्ञान ीलता और संवेदन ीलता का होना पाया जाता है। यह प्राकृतिक विधि से होता है। इसे अभी तक कोई बनाने वाला, बिगाड़ने वाला है, ये झंझट रहा ही है। इसे लेकर अनेकों मान्यताएं प्रचलित हैं हीं। इसी आधार पर मनुश्य सोचता है, हम भी बना सकते हैं, बिगाड़ सकते हैं। यही आधुनिक विज्ञान का मूल आधार है। बना सकने, बिगाड़ सकने के झंझट में पड़ने के कारण काफी कुंठाएं आ चुकी हैं। हर स्तर पर विरोध है। कुछ दे ा कहते हैं, हम एटम बम बना सकते हैं, कुछ नहीं बना सकते इसलिए ये समानता का कोई अर्थ ही नहीं हुआ, क्योंकि समानता अस्तित्व सहजता में है। अस्तित्व जो है सहअस्तित्व सहज है। असहजता से हम कुछ भी करते हैं, कहीं न कहीं उसका विरोध होता ही है। उसके फल परिणाम भी विरोधभासी होते हैं। जैसे व्यापार, वह इसी कारण लाभोन्मादी हो गया और इस कारण ज्यादा–कम वाला पि ाच पीछे पड़ गया। एक आदमी सोचता है कम है, दूसरा आदमी सोचता है, ज्यादा है और झगड़ा बना ही रहता है। इस तरह किसी भी मनुश्य का स्वस्थ रूप में सुखी होकर कहीं जीना बना नहीं। हर कोई इसी अव्यवस्था का ि ाकार हो गया है। इसलिए स्वस्थ रूप में जीने के लिए हर मनुश्य को मूल्य और मूल्यांकन विधि से जीना होगा। उसका पहला चरण समझदारी, दूसरा चरण है ईमानदारी, तीसरा चरण है जिम्मेदारी, चौथा चरण है भागीदारी। इन चार चरणों में मानव को अपनी समझदारी को प्रमाणित करना है।

समझदारी के अर्थ में तीन चीजें हैं जीवन ज्ञान, अस्तित्व द र्न ज्ञान और मानवीयतापूर्ण आचरण ज्ञान। जीवन नित्य है, सुखाकांक्षी है और सुख को मानव परंपरा में ही प्रमाणित कर सकता है। इसके लिए प्रयत्न करने का पहला मुददा है जीवन को समझना, जिसका नाम है ''जीवन विद्या''। विद्या का धारक–वाहक जीवन है। विद्या के स्वरूप में तीन भाग होते हैं। विद्या, विद्वता और विद्वान। संपूर्ण अस्तित्व ही विद्या है, इस अस्तित्व में जीवन भी अविभाज्य है। जो भी समझदारी होती है वह जीवन में ही होती है, यही विद्वता है। इसलिए विद्वान मनुश्य ही होता है। इसलिए संपूर्ण सहअस्तित्व रूपी अस्तित्व ही समझने की वस्तु है। यही विद्या है। इसे समझे बिना मानव तृप्त नहीं हो सकता क्योंकि सब कुछ को समझे बिना प्र न बने ही रहते हैं, ये प्र न मनुश्य को ाांत नहीं रहने देते, इनका उत्तर पाकर ही मनुश्य ाांत होता है, फिर प्रमाणित करता है, यही तृप्ति है।

-ए नागराज

अधिक जानकारी के लिए www.madhyasth.info देखें